

# भारत में महिलाओं की वर्तमान स्थिति की, वैदिक तथा मध्यकाल की स्थिति की तुलनात्मक सामाजिक विवेचना

Mrs. Bala Devi\*

Student

-----X-----

## प्रस्तावना

भारत में महिलाओं की स्थिति ने पिछली कुछ सदियों में कई बड़े बदलावों का सामना किया है। प्राचीन काल में पुरुषों के साथ बराबरी की स्थिति से लेकर मध्ययुगीन काल के निम्न स्तरीय जीवन और साथ ही कई सुधारकों द्वारा समान अधिकारों को बढ़ावा दिए जाने तक, भारत में महिलाओं का इतिहास काफी गतिशील रहा है। आधुनिक भारत में महिलाएं राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, लोक सभा अध्यक्ष, प्रतिपक्ष की नेता आदि जैसे शीर्ष पदों पर आसीन हुई हैं।

भारत में महिलाओं की स्थिति सदैव एक समान नहीं रही है। इसमें युगानुरूप परिवर्तन होते रहे हैं। उनकी स्थिति में वैदिक युग से लेकर आधुनिक काल तक अनेक उतार-चढ़ाव आते रहे हैं तथा उनके अधिकारों में तदनुरूप बदलाव भी होते रहे हैं। वैदिक युग में स्त्रियों की स्थिति सुदृढ़ थी, परिवार तथा समाज में उन्हें सम्मान प्राप्त था। उनको शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। सम्पत्ति में उनको बराबरी का हक था। सभा व समितियों में से स्वतंत्रतापूर्वक भाग लेती थी तथापि ऋग्वेद में कुछ ऐसी उक्तियां भी हैं जो महिलाओं के विरोध में दिखाई पड़ती हैं। मैत्रयीसंहिता में स्त्री को झूठ का अवतार कहा गया है। ऋग्वेद का कथन है कि स्त्रियों के साथ कोई मित्रता नहीं है, उनके हृदय भेड़ियों के हृदय हैं। ऋग्वेद के अन्य कथन में स्त्रियों को दास की सेना का अस्त्र-शस्त्र कहा गया है। स्पष्ट है कि वैदिक काल में भी कहीं न कहीं महिलाये नीची दृष्टि से देखी जाती थीं। फिर भी हिन्दू जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वह समान रूप से आदर और प्रतिष्ठित थीं। शिक्षा, धर्म, व्यक्तित्व और सामाजिक विकास में उसका महान योगदान था। संस्थानिक रूप से स्त्रियों की अवनति उत्तर वैदिककाल से शुरू

हुई। उन पर अनेक प्रकार के नियोग्यताओं का आरोपण कर दिया गया। उनके लिए निन्दनीय शब्दों का प्रयोग होने लगा। उनकी स्वतंत्रता और उन्मुक्तता पर अनेक प्रकार के अंकुश लगाये जाने लगे। मध्यकाल में इनकी स्थिति और भी दयनीय हो गयी। पर्दा प्रथा इस सीमा तक बढ़ गई कि स्त्रियों के लिए कठोर एकान्त नियम बना दिए गये। शिक्षण की सुविधा पूर्णरूपेण समाप्त हो गई।

नारी के सम्बन्ध में मनु का कथन "पितारक्षति कौमारे.....न स्त्री स्वातन्त्र्यम् अर्हति।" वहीं पर उनका कथन "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता", भी दृष्टव्य है वस्तुतः यह समस्या प्राचीनकाल से रही है। इसमें धर्म, संस्कृति साहित्य, परम्परा, रीतिरिवाज और शास्त्र को कारण माना गया है। भारतीय दृष्टि से इस पर विचार करने की की जरूरत है। पश्चिम की दृष्टि विचारणीय नहीं। भारतीय सन्दर्भों में समस्या के समाधान के लिए प्रयास हो तो अच्छे हुए हैं। भारतीय मनीषा समानाधिकार, समानता, प्रतियोगिता की बात नहीं करती वह सहयोगिता सहधर्मिणी, सहचारिता की बात करती है। इसी से परस्पर सन्तुलन स्थापित हो सकता है।

## वैदिक काल में महिलाये

वैदिक एवं उत्तर वैदिक काल में महिलाओं को गरिमामय स्थान प्राप्त था। उसे देवी, सहधर्मिणी अर्द्धांगिनी, सहचरी माना जाता था। स्मृतिकाल में भी "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" कहकर उसे सम्मानित स्थान प्रदान किया गया है। पौराणिक काल में शक्ति का स्वरूप मानकर उसकी आराधना की जाती रही है। किन्तु 11 वीं शताब्दी से 19 वीं शताब्दी के बीच भारत में

महिलाओं की स्थिति दयनीय होती गई। एक तरह से यह महिलाओं के सम्मान, विकास, और सशक्तिकरण का अंधकार युग था। मुगल शासन, सामन्ती व्यवस्था, केन्द्रीय सत्ता का विनष्ट होना, विदेशी आक्रमण और शासकों की विलासितापूर्ण प्रवृत्ति ने महिलाओं को उपभोग की वस्तु बना दिया था और उसके कारण बाल विवाह, पर्दा प्रथा, अशिक्षा आदि विभिन्न सामाजिक कुरीतियों का समाज में प्रवेश हुआ, जिसने महिलाओं की स्थिति को हीन बना दिया तथा उनके निजी व सामाजिक जीवन को कलुषित कर दिया।

धर्मशास्त्र का यह कथन नारी स्वतन्त्रता का अपहरण नहीं है अपितु नारी के निर्बाध रूप से स्वधर्म पालन कर सकने के लिए बाह्य आपत्तियों से उसकी रक्षा हेतु पुरुष समाज पर डाला गया उत्तरदायित्व है। इसलिए धर्मनिष्ठ पुरुष इसे भार न मानकर, धर्मरूप में स्वीकार अपना कल्याणकारी कर्तव्य समझता है। पौराणिक युग में नारी वैदिक युग के दैवी पद से उतरकर सहधर्मिणी के स्थान पर आ गई थी। धार्मिक अनुष्ठानों और याज्ञिक कर्मों में उसकी स्थिति पुरुष के बराबर थी। कोई भी धार्मिक कार्य बिना पत्नी नहीं किया जाता था। श्रीरामचन्द्र ने अश्वमेध के समय सीता की हिरण्यमयी प्रतिमा बनाकर यज्ञ किया था। यद्यपि उस समय भी अरुन्धती (महर्षि वशिष्ठ की पत्नी), लोपामुद्रा, महर्षि अगस्त्य की पत्नी, अनुसूया ( महर्षि अत्रि की पत्नी) आदि नारियाँ दैवी रूप की प्रतिष्ठा के अनुरूप थी तथापि ये सभी अपने पतियों की सहधर्मिणी ही थीं।

### मध्यकाल में महिलाये

समाज में भारतीय महिलाओं की स्थिति में मध्ययुगीन काल के दौरान और अधिक गिरावट आयी जब भारत के कुछ समुदायों में सती प्रथा, बाल विवाह और विधवा पुनर्विवाह पर रोक, सामाजिक जिंदगी का एक हिस्सा बन गयी थी। भारतीय उपमहाद्वीप में मुसलमानों की जीत ने परदा प्रथा को भारतीय समाज में ला दिया। राजस्थान के राजपूतों में जौहर की प्रथा थी। भारत के कुछ हिस्सों में देवदासियां या मंदिर की महिलाओं को यौन शोषण का शिकार होना पड़ा था। बहुविवाह की प्रथा हिन्दू क्षत्रिय शासकों में व्यापक रूप से प्रचलित थी। कई मुस्लिम परिवारों में महिलाओं को जनाना क्षेत्रों तक ही सीमित रखा गया था।

इन परिस्थितियों के बावजूद भी कुछ महिलाओं ने राजनीति, साहित्य, शिक्षा और धर्म के क्षेत्रों में सफलता हासिल की। रजिया सुल्तान दिल्ली पर शासन करने वाली एकमात्र महिला सम्राज्ञी बनीं। गोंड की महारानी दुर्गावती ने 1564 में मुगल सम्राट अकबर के सेनापति आसफ़ खान से लड़कर अपनी जान गंवाने से पहले

पंद्रह वर्षों तक शासन किया था। चांद बीबी ने 1590 के दशक में अकबर की शक्तिशाली मुगल सेना के खिलाफ अहमदनगर की रक्षा की। जहांगीर की पत्नी नूरजहाँ ने राजशाही शक्ति का प्रभावशाली ढंग से इस्तेमाल किया और मुगल राजगद्दी के पीछे वास्तविक शक्ति के रूप में पहचान हासिल की। मुगल राजकुमारी जहाँआरा और जेबुन्निसा सुप्रसिद्ध कवियत्रियाँ थीं और उन्होंने सत्तारूढ़ प्रशासन को भी प्रभावित किया। शिवाजी की माँ जीजाबाई को एक योद्धा और एक प्रशासक के रूप में उनकी क्षमता के कारण क्वीन रीजेंट के रूप में पदस्थापित किया गया था। दक्षिण भारत में कई महिलाओं ने गाँवों, शहरों और जिलों पर शासन किया और सामाजिक एवं धार्मिक संस्थानों की शुरुआत की।

भक्ति आंदोलन ने महिलाओं की बेहतर स्थिति को वापस हासिल करने की कोशिश की और प्रभुत्व के स्वरूपों पर सवाल उठाया। एक महिला संत-कवयित्री मीराबाई भक्ति आंदोलन के सबसे महत्वपूर्ण चेहरों में से एक थीं। इस अवधि की कुछ अन्य संत-कवयित्रियों में अक्का महादेवी, रामी जानाबाई और लाल देव शामिल हैं। हिंदुत्व के अंदर महानुभाव, वरकारी और कई अन्य जैसे भक्ति संप्रदाय, हिंदू समुदाय में पुरुषों और महिलाओं के बीच सामाजिक न्याय और समानता की खुले तौर पर वकालत करने वाले प्रमुख आंदोलन थे।

भक्ति आंदोलन के कुछ ही समय बाद सिक्खों के पहले गुरु, गुरु नानक ने भी पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता के संदेश को प्रचारित किया। उन्होंने महिलाओं को धार्मिक संस्थानों का नेतृत्व करने; सामूहिक प्रार्थना के रूप में गाये जाने वाले वाले कीर्तन या भजन को गाने और इनकी अगुआई करने; धार्मिक प्रबंधन समितियों के सदस्य बनने; युद्ध के मैदान में सेना का नेतृत्व करने; विवाह में बराबरी का हक और अमृत (दीक्षा) में समानता की अनुमति देने की वकालत की। अन्य सिख गुरुओं ने भी महिलाओं के प्रति भेदभाव के खिलाफ उपदेश दिए।

मध्यकाल में विदेशियों के आगमन से स्त्रियों की स्थिति में जबर्दस्त गिरावट आयी। अशिक्षा और रूढ़ीय जकड़ती गई, घर की चाहरी दीवारी में कैद होती गई और नारी एक अबला, रमणी और भोग्या बनकर रह गई। आर्य समाज आदि समाज-सेवी संस्थाओं ने नारी शिक्षा आदि के लिए प्रयास आरम्भ किये। उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में भारत के कुछ समाजसेवियों जैसे राजाराम मोहन राय, दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर तथा केशवचन्द्र सेन ने अत्याचारी सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध आवाज उठायी। इन्होंने तत्कालीन अंग्रेजी शासकों के समक्ष स्त्री पुरुष समानता, स्त्री शिक्षा, सती प्रथा पर रोक तथा

बहु विवाह पर रोक की आवाज उठी। इसी का परिणाम था सती प्रथा निषेध अधिनियम, 1829, 1856 में हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1891 में एज आफ कन्सटेन्ट बिल, 1891, बहु विवाह रोकने के लिये वेटिव मैरिज एक्ट पास कराया। इन सभी कानूनों का समाज पर दूरगामी परिणाम हुआ। वर्षों के नारी स्थिति में आयी गिरावट में रोक लगी। आने वाले समय में स्त्री जागरूकता में वृद्धि हुई और नये नारी संगठनों का सूत्रपात हुआ जिनकी मुख्य मांग स्त्री शिक्षा, दहेज, बाल विवाह जैसी कुरीतियों पर रोक, महिला अधिकार, महिला शिक्षा का माँग की गई।

महिलाओं के पुनरोत्थान का काल ब्रिटिश काल से शुरू होता है। ब्रिटिश शासन की अवधि में हमारे समाज की सामाजिक व आर्थिक संरचनाओं में अनेक परिवर्तन किए गए। ब्रिटिश शासन के 200 वर्षों की अवधि में स्त्रियों के जीवन में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष अनेक सुधार आये। औद्योगिकरण, शिक्षा का विस्तार, सामाजिक आन्दोलन व महिला संगठनों का उदय व सामाजिक विधानों ने स्त्रियों की दशा में बड़ी सीमा तक सुधार की ठोस शुरुआत की।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व तक स्त्रियों की निम्न दशा के प्रमुख कारण अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता, धार्मिक निषेध, जाति बन्धन, स्त्री नेतृत्व का अभाव तथा पुरुषों का उनके प्रति अनुचित दृष्टिकोण आदि थे। मेटसन ने हिन्दू संस्कृति में स्त्रियों की एकान्तता तथा उनके निम्न स्तर के लिए पांच कारकों को उत्तरदायी ठहराया है, यह है- हिन्दू धर्म, जाति व्यवस्था, संयुक्त परिवार, इस्लामी शासन तथा ब्रिटिश उपनिवेशवाद। हिन्दूवाद के आदर्शों के अनुसार पुरुष स्त्रियों से श्रेष्ठ होते हैं और स्त्रियों व पुरुषों को भिन्न-भिन्न भूमिकाएँ निभानी चाहिए। स्त्रियों से माता व गृहणी की भूमिकाओं की और पुरुषों से राजनीतिक व आर्थिक भूमिकाओं की आशा की जाती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से सरकार द्वारा उनकी आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक और राजनीतिक स्थिति में सुधार लाने तथा उन्हें विकास की मुख्य धारा में समाहित करने हेतु अनेक कल्याणकारी योजनाओं और विकासात्मक कार्यक्रमों का संचालन किया गया है। महिलाओं को विकास की अखिल धारा में प्रवाहित करने, शिक्षा के समुचित अवसर उपलब्ध कराकर उन्हें अपने अधिकारों और दायित्वों के प्रति सजग करते हुए उनकी सोंच में मूलभूत परिवर्तन लाने, आर्थिक गतिविधियों में उनकी अभिरूचि उत्पन्न कर उन्हें आर्थिक-सामाजिक दृष्टि से आत्मनिर्भरता और स्वावलम्बन की ओर अग्रसारित करने जैसे

अहम उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पिछले कुछ दशकों में विशेष प्रयास किये गए हैं।

उन्नीसवीं सदी के मध्यकाल से लेकर इक्कीसवीं सदी तक आते-आते पुनः महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ और महिलाओं ने शैक्षिक, राजनीतिक सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, प्रशासनिक, खेलकूद आदि विविध क्षेत्रों में उपलब्धियों के नए आयाम तय किये। आज महिलाएँ आत्मनिर्भर, स्वनिर्मित, आत्मविश्वासी हैं, जिसने पुरुष प्रधान चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में भी अपनी योग्यता प्रदर्शित की है। वह केवल शिक्षिका, नर्स, स्त्री रोग की डाक्टर न बनकर इंजीनियर, पायलट, वैज्ञानिक, तकनीशियन, सेना, पत्रकारिता जैसे नए क्षेत्रों को अपना रही हैं। राजनीति के क्षेत्रों में महिलाओं ने नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं। देश के सर्वोच्च राष्ट्रपति पद पर श्रीमती प्रतिभा पाटिल, लोकसभा स्पीकर के पद पर मीरा कुमार, कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी, उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री मायावती, वसुन्धरा राजे, सुषमा स्वराज, जयललिता, ममता बनर्जी, शीला दीक्षित आदि महिलाएँ राजनीति के क्षेत्र में शीर्ष पर हैं। सामाजिक क्षेत्र में भी मेधा पाटकर, श्रीमती किरण मजूमदार, इलाभट्ट, सुधा मूर्ति आदि महिलाएँ ख्यातिलब्ध हैं। खेल जगत में पी.टी. ऊषा, अंजू बाबी जार्ज, सुनीता जैन, सानिया मिर्जा, अंजू चोपड़ा आदि ने नए कीर्तिमान स्थापित किये हैं। आई.पी.एस. किरण बेदी, अंतरिक्ष यात्री सुनीता विलियम्स आदि ने उच्च शिक्षा प्राप्त करके विविध क्षेत्रों में अपने बुद्धि कौशल का परिचय दिया है।

20 वीं सदी के उत्तरार्द्ध और अब 21 वीं सदी के प्रारम्भ में बराबरी व्यवहार वाले जोड़े बनने लगे हैं। नौकरी वाली नारी के साथ पुरुष की मानसिकता में बदलाव आया है। पहले नौकरी वाली औरत के पति को "औरत की कमाई खाने वाला" कह कर चिढ़ाया जाता था। आज यह सोच बदल चुकी है। स्त्री स्वातंत्र्य में अर्थशास्त्र का योगदान अद्भुत है। स्त्रियां धन कमाने लगीं हैं तो पुरुष की मानसिकता में भी परिवर्तन आया है। आर्थिक दृष्टि से नारी अर्थचक्र के केन्द्र की ओर बढ़ रही है। विज्ञापन की दुनियां में नारियां बहुत आगे हैं। बहुत कम ही ऐसे विज्ञापन होंगे जिनमें नारी न हो लेकिन विज्ञापन में अक्षीलता चिन्तन का विषय है। इससे समाज में विकृतियाँ भी बढ़ रही हैं। अर्थशास्त्र ने समाजशास्त्र को बौना बना दिया है।

आज की नारी राजनीति, कारोबार, कला तथा नौकरियों में पहीचकर नये आयाम गढ़ रही हैं। भूमण्डलीकृत दुनियां में भारत और यहाँ की नारी ने अपनी एक नितान्त सम्मानजनक

जगह कायम कर ली है। आंकड़े दर्शाते हैं कि प्रतिवर्ष कुल परीक्षार्थियों में 50 प्रतिशत महिलाएँ डाक्टरी की परीक्षा उत्तीर्ण करती हैं। आजादी के बाद लगभग 12 महिलाएँ विभिन्न राज्यों की मुख्यमंत्री बन चुकी हैं। भारत के अग्रणी साफ्टवेयर उद्योग में 21 प्रतिशत पेशेवर महिलाएँ हैं। फौज, राजनीति, खेल, पायलट तथा उद्यमी सभी क्षेत्रों में जहाँ वषरें पहले तक महिलाओं के होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। वहाँ सिर्फ नारी स्वयं को स्थापित ही नहीं कर पायी है बल्कि वहाँ सफल भी हो रही हैं।

यदि आपको विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा। महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वतः हो जायेगा।-जवाहर लाल नेहरू महिलाओं को शिक्षा देने तथा सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिये जो सुधार आन्दोलन प्रारम्भ हुआ उससे समाज में एक नयी जागरूकता उत्पन्न हुई है। बाल-विवाह, भ्रूण-हत्या पर सरकार द्वारा रोक लगाने का अथक प्रयास हुआ है। शैक्षणिक गतिशीलता से पारिवारिक जीवन में परिवर्तन हुआ है। गांधीजी ने कहा था कि एक लड़की की शिक्षा एक लड़के की शिक्षा की उपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि लड़के को शिक्षित करने पर वह अकेला शिक्षित होता है किन्तु एक लड़की की शिक्षा से पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है। शिक्षा ही वह कुंजी है जो जीवन के वह सभी द्वार खोल देती है जो कि आवश्यक रूप से सामाजिक है। शिक्षित महिलाओं को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय होने में बहुत मदद मिली। महिलाएँ अपनी स्थिति व अपने अधिकारों के विषय में सचेत होने लगीं। शिक्षा ने उन्हें आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक न्याय तथा पुरुष के साथ समानता के अधिकारों की माँग करने को प्रेरित किया।

संवैधानिक अधिकारों में विभिन्न कानूनों के द्वारा महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार मिलने से उनकी स्थिति में परिवर्तन हुआ। महिलाओं की विवाह विच्छेद परिवार की सम्पत्ति में पुरुषों के समान अधिकार दिये गये। दहेज पर कानूनी प्रतिबन्ध लगा तथा उन व्यक्तियों के लिये कठोर दण्ड की व्यवस्था की गयी जो दहेज की मांग को लेकर महिलाओं का उत्पीड़न करते हैं। अब सरकार लिव इन पर विचार कर रही है। संयुक्त परिवारों के विघटन होने से जैसे-जैसे एकांकी परिवार की संख्या बढ़ी इनमें न केवल महिलाओं को सम्मानित स्थान मिलने लगा बल्कि लड़कियों की शिक्षा को भी एक प्रमुख आवश्यकता के रूप में देखा जाने लगा। वातावरण अधिक समताकारी होने से महिलाओं को अपने व्यक्तित्व का विकास करने के अवसर मिलने लगे।

महिला शिक्षा समाज का आधार है। समाज द्वारा पुरुष को शिक्षित करने का लाभ केवल मात्र पुरुष को होता है जबकि महिला शिक्षा का स्पष्ट लाभ परिवार, समाज एवं सम्पूर्ण राष्ट्र को

होता है। चूंकि महिला ही माता के रूप में बच्चे की प्रथम अध्यापक बनती है। महिला शिक्षा एवं संस्कृति को सभी क्षेत्रों में पर्याप्त समर्थन मिला। यद्यपि कुछ समय तक महिला शिक्षा के समर्थक कम किन्तु आज समय एवं परिस्थितियों ने महिला शिक्षा को अनिवार्य बना दिया है।

स्त्री और मुक्ति आज भी नदी के दो किनारे की तरह है जो कभी मिल नहीं पाती सतही तौर पर देखा जाये तो लगता है कि भारत ही नहीं, विश्व पटल पर अपनी पहचान बनाती हुई स्त्रियों ने अपनी पुरानी मान्यतायें बदली हैं। आज की स्त्री की अस्मिता का प्रश्न मुखर होता जा रहा है। अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिये संघर्ष करती हुई स्त्रियों ने लम्बा रास्ता तय कर लिया है, परन्तु आज भी एक बड़ा हिस्सा सदियों से सामाजिक अन्याय का शिकार है। "जब-जब स्त्री अपनी उपस्थिति दर्ज कराना चाहती है तब तब जाने कितने रीति-रिवाजों, परम्पराओं पौराणिक आख्यानों की दुहाई देकर उसे गुमनाम जीवन जीने पर विवश कर दिया जाता है।"

वस्तुतः इक्कीसवीं सदी महिला सदी है। वर्ष 2001 महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया गया। इसमें महिलाओं की क्षमताओं और कौशल का विकास करके उन्हें अधिक सशक्त बनाने तथा समग्र समाज को महिलाओं की स्थिति और भूमिका के संबंध में जागरूक बनाने के प्रयास किये गए। महिला सशक्तिकरण हेतु वर्ष 2001 में प्रथम बार प्रथम बार "राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति" बनाई गई जिससे देश में महिलाओं के लिये विभिन्न क्षेत्रों में उत्थान और समुचित विकास की आधारभूत विशेषताएँ निर्धारित किया जाना संभव हो सके। इसमें आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में पुरुषों के साथ समान आधार पर महिलाओं द्वारा समस्त मानवाधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रताओं का सैद्धान्तिक तथा वस्तुतः उपभोग पर तथा इन क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी व निर्णय स्तर तक समान पहुँच पर बल दिया गया है।

आज देखने में आया है कि महिलाओं ने स्वयं के अनुभव के आधार पर, अपनी मेहनत और आत्मविश्वास के आधार पर अपने लिए नई मंजिलें, नये रास्तों का निर्माण किया है। क्या मात्र इस आधार पर उस सफलता के पीछे क्षणांश भी किसी पुरुष के हाथ होने की सम्भावना को नकार दिया जायेगा? यदि नहीं तो फिर समस्या कहाँ है? मैं कौन हूँ का प्रश्न अभी भी उत्तर की आस में क्यों खड़ा है?

जवाब हमारे सभी के अन्दर ही है पर उसको सामने लाने में हम घबराते भी दिखते हैं। स्त्री को एक देह से अलग एक स्त्री के रूप

में देखने की आदत को डालना होगा। स्त्री के कपड़ों के भीतर से नग्नता को खींच-खींच कर बाहर लाने की परम्परा से निजात पानी होगी। कोड ऑफ कंडक्ट किसी भी समाज में व्यवस्था के संचालन में तो सहयोगी हो सकते हैं किन्तु इसके अपरिहार्य रूप से किसी भी व्यक्ति पर लागू किये जाने से इसके विरोध की सम्भावना उतनी ही प्रबल हो जाती है जितनी कि इसको लागू करवाने की। क्या बिकाऊ है और किसे बिकना है, अब इसका निर्धारण स्वयं बाजार करता है, हमें तो किसी को बिकने और किसी को जोर जबरदस्ती से बिकने के बीच में आकर खड़े होना है। किसी की मजबूरी किसी के लिए व्यवसाय न बने यह समाज को ध्यान देना होगा।

नग्नता और शालीनता के मध्य की बारीक रेखा समाज स्वयं बनाता और स्वयं बिगाड़ता है। एक नजर में उसका निर्धारक पुरुष होता है तो दूसरी निगाह उसका निर्धारक स्त्री को मानती है। उचित और अनुचित, न्याय और अन्याय, विवेकपूर्ण और अविवेकपूर्ण, स्वाधीनता और उच्छृंखलता, दायित्व और दायित्वहीनता, शीलता और अशीलता के मध्य के धुँधलके को साफ करना होगा। समाज में सरोकारों का रहना भी उतना ही आवश्यक है जितना कि किसी भी स्त्री-पुरुष का। सामाजिकता के निर्वहन में स्त्री-पुरुष को समान रूप से सहभागी बनना होगा और इसके लिए स्त्री पुरुष को अपना प्रतिद्वंद्वी नहीं समझे और पुरुष भी स्त्री को एक देह नहीं, स्त्री रूप में एक इंसान स्वीकार करे। स्त्री की आज़ादी और खुले आकाश में उड़ान की शर्त उत्पादन में उसकी भूमिका हो। स्त्री की असली आज़ादी तभी होगी जब उसके दिमाग की स्वीकार्यता हो, न कि केवल उसकी देह की। अन्ततः कहीं ऐसा न हो कि स्त्री स्वतन्त्रता और स्वाधीनता का पर्व सशक्तिकरण की अवधारणा पर खड़ा होने के पूर्व ही विनष्ट होने लगे और आने वाली पीढ़ी फिर वही सदियों पुराना प्रश्न दोहरा दे कि 'मैं कौन हूँ?'

### उपसंहार

महिलाओं की स्थिति में सुधार ने देश के आर्थिक और सामाजिक सुधार के मायने भी बदल कर रख दिए हैं। दूसरे विकासशील देशों की तुलना में हमारे देश में महिलाओं की स्थिति काफी बेहतर है। यद्यपि हम यह तो नहीं कह सकते कि महिलाओं के हालात पूरी तरह बदल गए हैं पर पहले की तुलना में इस क्षेत्र में बहुत तरक्की हुई है। आज के इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में महिलाएं अपने अधिकारों के प्रति पहले से अधिक सचेत हैं। महिलाएं अब अपनी पेशेवर जिंदगी (सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक) को लेकर बहुत

अधिक जागरूक हैं जिससे वे अपने परिवार तथा रोजमर्रा की दिनचर्या से संबंधित खर्चों का निर्वाह आसानी से कर सकें।

वर्तमान समय में भारतीय सरकार द्वारा महिलाओं के उत्थान के लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन तो की जा रही हैं लेकिन इन योजनाओं का क्रियान्वयन निचले स्तर तक उचित ढंग से न पहुँच सकने के कारण स्त्रियों को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है। यह सत्य है कि वर्तमान समय में स्त्रियों की स्थिति में काफी बदलाव आए हैं, लेकिन फिर भी वह अनेक स्थानों पर पुरुष-प्रधान मानसिकता से पीड़ित हो रही हैं। इस सन्दर्भ में युगनायक एवं राष्ट्रनिर्माता स्वामी विवेकानन्द का यह कथन उल्लेखनीय है- "किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम थर्मामीटर है, वहाँ की महिलाओं की स्थिति। हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुँचा देना चाहिए, जहाँ वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सकें। हमें नारीशक्ति के उद्धारक नहीं, वरन् उनके सेवक और सहायक बनना चाहिए। भारतीय नारियाँ संसार की अन्य किन्हीं भी नारियों की भाँति अपनी समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखती हैं। आवश्यकता है उन्हें उपयुक्त अवसर देने की। इसी आधार पर भारत के उज्ज्वल भविष्य की संभावनाएँ सन्निहित हैं।"

### संदर्भ ग्रंथ सूची-

- राजकुमार डा0 नारी के बदले आयाम ,अर्जुन पब्लिशिंग हाउस  
2005
- भारतीय संविधान,अनु0 14,15,16,19,21,23,39
- गुप्ता कमलेश कुमार, महिला सशक्तिकरण,बुक एनक्लेव,  
जयपुर
- सिंह करण बहादुर ,महिला अधिकार व सशक्तिकरण ,कुरूक्षेत्र ,  
मार्च 2006
- सुरेश लाल श्रीवास्तव, राष्ट्रीय महिला आयोग, कुरूक्षेत्र, मार्च  
2007
- गौतम हरेन्द्र राज , महिला अधिकार संरक्षण , कुरूक्षेत्र मार्च  
2006
- व्यास, जय प्रकाश , नारी शोषण , ज्ञानदा प्रकाशन , 2003
- शैलजा नागेन्द्र , वोमेन्स राइट्स , ए डी वी पब्लिशर्स जयपुर ,  
2006

आहुजा, राम (1999) भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत प्रकाशन जयपुर, नई दिल्ली।

अल्टेकर, ए0एस0 (1956) द पोजीशन ऑफ वोमेन इन हिन्दु सिविलाइजेशन, मोतीलाल बनारसी लाल, वाराणसी

हसनैन, नदीम (2004) समकालीन भारतीय समाज, भारत बुक सेन्टर, लखनऊ।

जोशी, पुष्पा (1988) गांधी आन वोमन, सेन्टर फार वोमन'स डेवलपमेन्ट स्टडीज, दिल्ली

मिश्र, जयशंकर (2006) प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना

श्रीनिवास, एम0एन0 (1978) द चेन्जिंग पोजीशन ऑफ इण्डिया वूमन, आक्सफोर्ड, यूनिवर्सिटी प्रेस, बाम्बे

राजनारायण डॉ0, स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलना

अखण्ड ज्योति

---

**Corresponding Author**

**Mrs. Bala Devi\***

Student